भूमिका

विदित हो कि थोडे कालमें धर्मशास्त्र व निबंधोंकी ठीक व्यवस्था न जाननेके कारण ये बात प्रसिद्ध होगई कि ब्रह्म-गायत्री केवल ब्राह्मणोंके ही लियेहै और क्षत्रिय वा वैश्योंके लिये नहीं किंतु क्षत्रिय वा वैश्य गायत्री भिन्न है और—

"कलावाद्यन्तयोः स्थितिः"

इस वचनको लेकर यह भी कह बैठतेहैं कि कलियुगमें ब्राह्मण, शूद्र दो ही वर्ण हैं क्षत्रिय वैश्य दोनों वर्णोंका अभाव है बस इस मिथ्या प्रसिद्धिसे वर्णधर्ममें बडी हानि व गडबड देख पडतीहैं अर्थात् कितने ही क्षत्रिय वैश्यों ने अपने विद्या-हीन पुरोहितोंके कहने पर (गायत्री) का अनधिकार मान यज्ञोपवीतसे ध्यान उठाकर स्वयं धर्मच्युत होना स्वीकार कर लिया कितनेही लोग स्नान संध्या यज्ञोपवीत आदिको आल-स्य व प्रमाद से बखेडा तथा हानिकारक और केवल ब्राह्मणों का कर्तव्य जान छोड बैठे अत एव वर्तमान में क्षत्रिय व वैश्यों में यज्ञोपवीत संस्कारका प्रायः अभाव देख पडताहै हां जहां बालक १० वर्षके लगभग हुवा कि विवाहकी चिन्तामें मग्न हो-तेहैं और जो मुख्य संस्कार जनेउ है कि जिसके होने पर तेज व यश, धन, धर्म बढताहै उसको भूल जातेहैं और स्मरण रहै कि जैसे विना यज्ञोपवीत ब्राह्मणका बालक धर्मकर्मका अधि-कारी नहीं होता ऐसे क्षत्रिय वैश्य भी विना यज्ञोपवीत अपने वर्णोंसे गिरके धर्मके कामका नहीं रहते इसलिये सकल साधा-रणके भ्रम दुर होनेके लिये ऐसे लेखकी जिसके द्वारा प्र[illegible]

भांति ज्ञात हो जाय कि त्र्यारोंवर्ण की स्थिति व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तीनों वर्णोंके लिये एकही आर्षीगायत्रीका अधिकार प्रमाण सिद्ध है आवश्यकता प्रतीत हुई इस लिये यह पुस्तक मुद्रित कराके प्रकाशित कीगई ।

भवदीय

पं० मन्नालालशर्मा गौड़
महार्ष्यनिवासी

नंबर	छंदनाम	गायत्री	उष्णिक्	अनुष्टुप्	बृहती	पंक्तिः	त्रिष्टुप्	जगती
१	आर्षी	२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८
२	दैवी	१	२	३	४	५	६	७
३	आसुरी	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
४	प्राजापत्यी	८	१२	१६	२०	२४	२८	३२
५	याजुषी	६	७	८	९	१०	११	१२
६	साम्नी	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४
७	आर्ची	१८	२१	२४	२७	३०	३३	३६
८	ब्राह्मी	३६	४२	४८	५४	६०	६६	७२

गायत्र्यादि आर्षछन्दोंमें जो एक अक्षर कम हो तो निचृत् और एक अधिक हो तो भूरिज छंद होजाताहै और ऐसेही दो अक्षर न्यून हों तो, स्वराट् और दो अधिक हों तो विराट् छंद हो जाताहै परंच दोके न्यूनाधिकमें देवतादिके विचारसे छंद मानना ।

श्रीः

वैश्य वर्ण धर्म मीमांसा

प्र. १ गुरूजी महाराज एकजाति किसको, द्विजाति किसको और ऐसेही त्रिजाति किसको कहतेहैं सो कृपा करके कहिये ।

उ. एकजाति शूद्रोंको, द्विजाति ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णोंको कहतेहैं और ऐसेही इन द्विजातियों मेंसे जो कोई यज्ञ करनेकी इच्छासे दीक्षाग्रहण करै वह त्रिजाति कहाताहै ।

प्र. २ इनका भेद भिन्न२ करके कहो ।

उ. प्रथम माताके गर्भसेही जात (जन्म) हो सो एकजाति (शूद्रादि) होतेहैं (१) द्विजाति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ये प्रथम तो माताके गर्भसे जन्म लेवैं बाद दूसरा जन्म जनेउके सँस्कारके वक्त सावित्रीसे जन्म लेवै इससे द्विजाति कहातेहैं (२) त्रिजाति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्योंमेंसे कोईभी प्रबल धनी पुरुष यज्ञ करना चाहै कोई कामना वास्ते तो उसके पहले यज्ञदीक्षामें गायत्र्यादि ऋचाओंसे जन्म लेवै सो त्रिजाति कहाताहै । जैसे जयपुरमहाराजा सवाई जयसिहजी अश्वमेध और कृष्णगढमहाराज

के भाईसाहव सोमयाग करके त्रिजाति कहलाये। ऐसेही पहलेभी कितनेही ब्राह्मणादि यज्ञ करके त्रिजाति हुयेहैं।

प्र. ३ इसमें क्या प्रमाण है।

उ. देखो मनुजी अध्याय २ श्लोक १६९ में

"मातुरग्रेऽधिजननं द्वितीयं मौंजिवन्धने।
तृतीयं यज्ञदीक्षायां द्विजस्य श्रुतिचोदनात्"

अर्थ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीनोंके प्रथम जन्म माताके गर्भसे, दूसरा उपनयन (जनेउ) में गायत्री आचार्यरूप मातापिताओंसे जन्म है, तीसरा यज्ञके निमित्त दीक्षा लवैं उसमें भी गायत्र्यादि मातापिताओंसे जन्म वेदने कहा है।

प्र. ४ क्या जनेउ विना लिये द्विज नहीं होसक्तेहैं तीनों वर्ण।

उ. हां विलकुल जनेउ विना जैसाका तैसा वर्ण वनां रहताहै। इसमें प्रमाण भी देखो वेद लिखताहै।

ब्राह्मण्यां ब्राह्मणाज्जातो ब्राह्मणः।

अपने वर्णकी पर्णी हुई स्त्रीमें पुत्र पैदा होय सो अपना वर्णही होताहै यथा ब्राह्मणसे निज पर्णाता ब्राह्मणीमें पैदा हो सो ब्राह्मण, क्षत्रियसे पर्णाता क्षत्रियामें हो सो क्षत्रिय, ऐसेही वैश्यपुरुषसे निज पर्णाता स्त्रीमें पुत्र हो सो वैश्यही होताहै और शूद्रसे शूद्रामें हो सो शूद्र होगा, स्मृति भी लिखतीहै कि

जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते ।
विद्यत्ताचापि विप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रियमुच्यते ॥

जन्म लेनेसे त्रिवर्ण पुरुष अपने वर्णनामी ही होगा, जनेउके होनेसे द्विज कहावेंगे तीनोंही वर्ण और आपके वेद शाखाके पढनेसे ब्राह्मणमें विप्रत्व, क्षत्रियमें क्षत्रियत्व, वैश्यमें वैश्यत्व अर्थात् असली धर्मसे धर्मी (वैश्यधर्मी) कहावैगा और श्रोत्रिय भी कहावैगा निःसंदेह ।

प्र. ५ तो क्या ये कितनेही ब्राह्मण इस श्लोक—

जन्मना जायते शूद्रः

से सबही वर्णोंको जन्म लेतेही तो शूद्र कहतेहैं सो मिथ्या कहतेहैं ।

उ. हां बिलकुल मिथ्या है देखो और विचार भी करो कि जब वो जन्म लेके शूद्रही रहा तो उसका उपनयन (जनेउ) का संस्कार कौन करा सकताहै और यदि शूद्र मानके भी वैदिक (जनेउं) संस्कार करावे तो उस ब्राह्मणके सिवाय जगतमें पातकी कौन ठहरैगा और वे शूद्र होके वैदिकोपदेश लिया तो उसके चांडाल होनेमें क्या संदेह रहा इस पराशर ऋषिके—

वेदाक्षरविचारेण शूद्रश्चाण्डालतां व्रजेदिति ।

प्रमाणसे, और जो चारों हीं वर्ण पैदा होतेही शूद्र ही पैदा होतेहैं तो मानना चाहिये कि ये सब सृष्टिही शूद्र है फिर चाहै सोही यानें नीच वर्ण भी वैदिक (जनेउ)

संस्कार कराके उत्तमोत्तम त्रिजाति वन सक्ताहै सो कदापि नहिं, शूद्र शूद्रही रहैगा वैश्य वैश्यही रहैगा ।

प्र. ६ अच्छा महाराज यदि जनेउ नहीं लें तो भी वो वैश्य तो वैश्यही रहैगा । क्योंकि वैश्यके घरमें जन्म लियाहै तो फिर जनेउ ले फिजूल द्रव्य खर्च कर क्यों कर्मके फंदेमें फँसैगा ।

उ. हां वैश्य नामकों रहैगा जैसें सिलावटके घरमें घटित अप्रतिष्ठित मूर्ति पूजनादि कार्योंकी नहीं वैसेही उस वैश्यकी २४ वर्षकी आयु व्यतीत होजायगी तिसके वाद न तो वो वैश्य देवकामका, न वो पितृकामका और न मनुष्योंके कामका अर्थात् उसके हाथसे किई हुई पूजा वगैरह देव नाहिं मानते, पितरीश्वर श्राद्ध तर्पण हंतकार नाहिं मानते और संस्कारित द्विज संध्यादि कर्म करनेवालेको भी चाहिये कि उसके हाथसे संस्पर्श किया हुवा अन्न जल खान पानमें न लावै और न उससे वेटीव्यवहार करै । देखो मनुजी अध्याय २ श्लोक ४० में लिखतेहैं कि—

नैतैरपूतैर्विधिवदापद्यपि हि कर्हिचित् ।

प्र. ७ अच्छा साहव देव पितर न लें तो मत लो हम करना ही छोड दैंगे ।

उ. ऐसा सवर लोगे कर्महीन, अकर्मी, कुकर्मी, कहाके दरिद्री हो नरकादिके दुःख भोग वारंवार रोगी दरिद्री पातकी होके वंशहीन होजावोगे देखो महाभारत—

अदत्तदानाच्च भवेद्दरिद्री दरिद्रभावाच्च करोति पापम् ।
पापप्रभावान्नरके प्रयाति पुनर्दरिद्री पुनरेव पापी ॥ १ ॥

टीका—दानादि कर्म न करनेसे मनुष्य दरिद्री और पापी होके नरकोंमें वासकर रोगी वंशहीन हो फिर नरकादि वारंवार भोगताहै सो तुमको भी ये क्लेश भोगना मंजूर है ।

प्र. ८ नहिं कदापि नहिं, हमें आप कहिये कि हमारा द्विजातिरूप यज्ञोपवीत संस्कार कौनसे वर्षमें होना चाहिये । और संस्कार कितने हैं, कबकब होने चाहिये । इनका हाल जहांतक होसके कम करके कहो । ताके उस मार्गमें चलकर हमलोग अच्छे फलके भागी बनें । और देवर्षि पितृऋणसे अलग होंय ।

उ. आप (वैश्यों) के जनेउका समय आठवें वर्षसे २४ वें वर्ष तक है । इस समयके बाद प्रायश्चित करके जनेउ लेनी पड़तीहै । और बाकी संस्कारोंके नाम समय नीचे लिखतेहैं ।

प्रथम ऋतुमती स्त्री हो तब गर्भाधान १६ दिन भीतर । दूसरा— गर्भ रहनेसे ३ रे मासमें पुंसवन । ३ सीमन्तोन्नयन (आठवां) छठे महिनेसे प्रसूत होने पहले २ । ४ जातकर्म जन्मके वक्त नालच्छेदनसे पहले अथवा जन्माशौचके बाद । ५ नामकर्ण— जन्माशौचके बादही । ६ निष्क्रमण (मकानसे निकालना) यातो १२ वें दिन ही या चौथे मासमें । ७ अन्नप्राशन (नाज खिलाना) लड़केको छठे महिनेसे पूरे मासोंमें लड़कीको पांचवेसे

५। ७। ९। ११ आदि मासोंमें। ८ जडूला १।२।३।५ आदि किसी वर्षमें कुलानुसार करना चाहिये। ९ जनेउ पहले लिखचुके। १०। ११। १२। १३। १४ इतने संस्कार वेदव्रत हैं सो आपमें प्रचलित नहीं हैं इस लिये नहीं लिखे। १५ समावर्त्त (विवाहसे पूर्वकालमें)। १६ विवाह १८ वें वर्षसे परमावधि ४५ वर्ष तक और लड़कीका ८ वें वर्षसे रजस्वला होने पहले करने चाहिये। यही सिद्ध संस्कार हैं।

प्र. ९ अब आप कहिये कि हमारा दूसरा जन्म (जनेउ) में माता पिता कौन होतेहैं। क्योंकि माता पिता बिना जन्म नहीं होता सो समझाय कहो।

उ. दूसरे जन्ममें जो वेदोंकी माता सावित्री है वही माता होती है। और मंत्र दाताही पिता होताहै। देखो मनु अध्याय २ श्लोक १७०—

तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते"

व्यासजी भी आपकी स्मृति अध्याय १ श्लोक २१ में लिखतेहैं—

द्वे जन्मनि द्विजातीनां मातुः स्यात्प्रथमं तयोः।
द्वितीयं छन्दसां मातुर्ग्रहणाद्विधिवद् गुरोः॥

प्र. १० उपदेश किस वेदमाताका होताहै उसका वेदस्मृतियोंमें कहां प्रमाण है।

उ. उपदेशिक वेदमाता जो ऋग्वेदके मण्डल ३ अ. ४ व १० मं. १० यजुर्वेद अ. ३ मं. ३५ और सामवेदमें उत्त-

र्रांचके म. ६ अ.म. ३ मं. १० मनु अ. २ श्लो. ७७ से ८० तक याज्ञवल्क्य अ. १ म. श्लो. ५१ में है। यह वेदमाता है।

प्र. ११ इसका नाम सावित्री है या गायत्री। इसमें अक्षर कितने, यह वेदमाता क्यों कहलाई। और अर्थ क्या है ?

उ. इसका नाम मुख्य गायत्री है, सविता नामसे परमात्माकी उपासनासे सावित्री भी है। अर्थ गायत्रीनामका यह है कि गानेवालेको तारनेवाली है। अक्षर इसमें २४ हैं जिनके पद आठ २ अक्षरके ३ हैं। जिसके प्रथम पदमें सातही अक्षर दीखनेमें आतेहैं परन्तु (एयम्) इसीके णी और यम् यह दो होजातेहैं। इसीसे त्रिपदा है। "अर्थ उस सविता देवताका प्रशंसनीय तेजका हम ध्यान करतेहैं वह हमारी बुद्धियोंको उत्तम (धर्मादिचतुर्वर्गसाधन) कार्योंमें लगावे "। अर्थात् इस गायत्रीके जप करनेसे बुद्धि सुधर कर अच्छे व्यापारादिसे मनसापूर्ण धन कमावै इससे अर्थ। और अर्थ (धन) से ब्रह्मचर्य गार्हस्थ्यादि अनेकविध धर्म सधै इससे धर्म और धर्मसे नाना प्रकारके कार्य सिद्ध हों इससे काम ३ और सब काम होते रहनेसे जीवन्मुक्तसे होकर जन्मांतरमेंभी सब तरहकी उत्तमता पूर्ण जन्म लेकर सुख भोगें इससे मोक्ष इस तरह अर्थ धर्म काम मोक्ष चारों वर्ग सधतेहैं।

प्र. १२ जो आपने गायत्री बतलाई उसको तो कितनेक ब्राह्मण ब्रह्मगायत्री कहतेहैं और वह ब्राह्मणोंके उपदेशमें

आतीहै । वैश्योंके लिये एक अलग ही गायत्री बतला-
तेहैं । वहभी समझाण । सो इसका सत्यासत्य कहिये ।

उ. जो ऐसा कहतेहैं । वे अन्धे हैं । देखो हारीत स्मृति
अ० १ श्लोक २५—

श्रुतिस्मृती च विप्राणां चक्षुषी देवनिर्मिते ।
काणस्तत्रैकया हीनो द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः ॥

ब्राह्मणोंके लिये परमात्माने १. वेदरूप २ स्मृतिरूप ऐसे
दो नेत्र बनायेहैं जो ब्राह्मण इनमेंसे एक पढाहै वह
काणा और दोनोंही न पढा हो वह अन्धा होताहै ।
इसलिये ऐसे अन्धों (जो वेदस्मृतिहीन हैं) का कहना
नहीं मानना चाहिये ।

प्र १३ तो आप प्रमाणसहित कहिये ।

उ. देखिये गायत्रीछन्द शास्त्रके अनुसार ८ प्रकारका
होताहै । जिसका चक्रभी पिंगलके अनुसार इसमें दियाहै
उसका सार यह है कि १. एक अक्षरके वैदिक मन्त्रको
दैवी गायत्री छंद कहतेहैं । ऐसेही ६ छः अक्षरके को
याजुषी गायत्री, ८ अक्षरकेको प्राजापत्ती गायत्री,
१२अक्षरकेको साम्नी गायत्री, १५ अक्षरकेको आसुरी
गायत्री, १८ अक्षरकेको आर्ची गायत्री, २४ अक्षरकेको
आर्षी गायत्री और ३६ अक्षरकेको ब्राह्मी गायत्री छन्द
कहतेहैं । तो अब कहिये जो २४ अक्षरवाली आर्षी
गायत्रीको ब्राह्मी मानतेहैं वे अन्धे हैं कि नहीं । अब
इसीही आर्षी गायत्रीका उपदेश तुम वैश्योंको होना

चाहिये । इसमें यह प्रमाण है कि प्रथमतो सारे वेद और सब शाखाओंमें लिखाहै कि यह २४ अक्षरकी आर्षी गायत्री—

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्

जो पारस्कर गृह्यसूत्रके(१)हरिहरभाष्यकी २८८के पृष्ठमें लिखीहै । दूसरे कात्यायन, पारस्कर, गोभिलाश्वलायनादि सब सूत्रोंमें भी लिखीहै । तीसरे मनुस्मृति अध्याय २ श्लो. ७७ से ८० तक—

त्रिभ्य एव तु वेदेभ्यः पादपादमदूदुहत् ।
तदित्यृचोऽस्याः सावित्र्याः परमेष्ठी प्रजापतिः ७७ । ७८ । ७९
एतयर्चाविसंयुक्तकाले च क्रियया स्वया ।
ब्रह्मक्षत्रियविड्योनिर्गर्हणां याति साधुषु ॥ ८० ॥

याज्ञवल्क्य अध्याय१ प्र.२श्लो.२२ । २३

स्नानमब्दैवतैर्मन्त्रैर्मार्जनं प्राणसंयमः ।
सूर्यस्य चाप्युपस्थानं गायत्र्याः प्रत्यहं जपः ॥ २२ ॥
गायत्रीं शिरसा सार्द्धं जपेद्व्याहृतिपूर्विकाम् ।
प्रतिप्रणवसंयुक्तां त्रिरयं प्राणसंयमः ॥ २३ ॥

इनकी मिताक्षरामें स्पष्ट मन्त्र लिखाहै । वृद्धयाज्ञवल्क्य-(ब्राह्मणसर्वस्वके (२) २१वें निरंकपनकी १०वीं पंक्तिमें

---

(१) यह पुस्तक ब्रजचन्द्रयन्त्रालयकी छपी हुईहै ।
(२) जो अथवाधीशने छपवायाहै ।

लिखाहै) और वृहद्विष्णु भी उसी पत्रकी ७वी पंक्तिमें लिखतेहैं । पराशरस्मृतिमें अ. ४ श्लो. १५४ । ५५ में लिखाहै कि वैश्यको गायत्री मन्त्रकाही उपदेश करना जो कि मन्वाद्विकोंने मानाहै । हेमाद्रि हलायुध धर्मसिंधु आदि सभी निबंधोंमें दशकर्मादि पद्धतियोंमें भी लिखाहै । इन उपरोक्त सभी ऋषि महर्षिप्रणीत वाक्योंका यह तात्पर्य है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन सभीको उपरोक्त " तत्सवितुर्व० " इसीही मंत्रका उपदेश देना चाहिये । इनके लिये जातिभेद से मंत्रभेदका कहीं कुछभी नहीं लिखाहै । और सबसे बढकर सबही स्मृतिकार यह लिखतेहैं कि वेदारंभ जिस समय करै उस समय (जैसे अन्य बातोंमें श्रीगणेश मनातेहैं) उसी तरह गायत्री मंत्रसेही करै । तो यहाँ जनेउमें वेदारंभ विना इस मंत्रोपदेशके हो नहीं सक्ताहै ।

प्र. १४ आपने कहा कि कहीं भी अन्य मंत्रका उपदेश नहीं लिखा तो पारस्करसूत्रके उपदेशस्थलमें २रे कांडकी ३री कंडिकाके ९वें सूत्रमें "जगतीं वैश्यस्य" यह लिखा बतलातेहैं सो क्या है ।

उ. देखो पारस्करगृह्यसूत्रका लेख हलायुधकृत ब्राह्मणसर्वस्व के सांक ७६ के पत्रमें ज्योंका त्यों लिखाहै उसमें यह सूत्र नहीं है । इसलिये यह ऊपरसे जोडा हुआ मालूम देताहै । क्योंकि जिस समय ब्राह्मणसर्वस्व बनाथा उस समय पारस्करमें यह सूत्र होता तो इसे हलायुध नहीं छोडते कुछना कुछ लिखतेही । और पारस्करने

जो कुछ भेद बतलायाहै सो पंचम कंडिकामें भिक्षाचरणमें लिखाहै उस जगह मंत्रकी चर्चाभी नहीं है। पहलेके सूत्रमें केवल वर्णभेद सिवाय कुछ न कहा । इसलिये पारस्करका भी यही स्थिर सिद्धांत है कि त्रिवर्णोंको इसी एक मंत्रका उपदेश हो । हां एक विशेष बात अवश्य है कि जो मनुष्य विदेशमें जीवित हो और उसके मरनेका भ्रम होकर उसके घरमें औदूर्ध्वदेहिक क्रिया होचुके तदनन्तर वही पुरुष जीवित घर आजाय तो उसके लिये जातकर्मादि सभी संस्कार होना लिखाहै । इसलिये उस समय यज्ञोपवीत संस्कारमें

तत्सवितुर्वृणीमहे वयं देवस्य भोजनम् ।
श्रेष्ठं सर्वधातमं तुरं भगस्य धीमहि ॥

ऋग्वेद अष्टक ४ अ. ४ मंत्र २५

इसका उपदेश करना चाहिये । यहां उसका नहीं । यह लेख धर्मसिंध्वादि निबंधकारोंका है ।

एक सबसें बढकर ये बात है कि तीनों वर्णोंकी १ गायत्री होनेमें जो देखो यदि कोई क्षत्रिय वैश्य ऋग्वेदी या सामवेदी हो तो उसकेलिये त्रिष्टुप् जगती जो वे पारस्करसूत्रके आधार पर बतारहे हैं कहांसे लावैंगे क्योंकि त्रिष्टुप् (तां सवितुः) मंत्र ऋग् साम दोनोंहीं वेदोंमें नहीं है और ऐसेही वैश्योंको जगती सावित्री (विश्वारूपाणि.) मंत्रभी सामादि वेदोंमें नहीं है तो अब कहिये कि जो असली गायत्री मंत्र है सो सब वेदों

में और सब शास्त्र में और सर्व मान्य परंपराप्रचलित हो उसके सिवाय क्या इन घडंतबाजोंके घडेहुवे मंत्रोंका उपदेश होगा ? कदापि नहिं ।

प्र. १५ खैर यह ऐसा ही है तो भिन्न प्रकारकी संध्याही क्यों बनाई गई है ।

उ. जब तीनों वर्णोंके लिये एक ही गायत्रीमंत्रोपदेश होनेके लिये इतना शास्त्रार्थ लिखा जाचुकाहै । और सभी मुक्तकंठसे एकही गायत्री मंत्रोपदेशको कह रहेहैं । फिर संध्याकी भिन्नता होनेका तो कुछ प्रमाण ही नहीं है । जब एक मंत्र है तो क्योंकर भिन्न भिन्न प्रकार की संध्या होसकती है । यह भिन्न संध्या तो किसीने घड़कर ही छपवा दीहै । अथवा आपको प्रायः दुराचारी देख कर जैसे भिन्न गायत्रीमंत्र बनाया उसी तरह संध्या भी बना कर छपवा दीहै क्योंकि किसी भी शास्त्रमें इस का मूल देखनेमें नहीं आया है । इसलिये यह सर्वथा निर्मूल है ।

प्र. १६ अच्छा वे एक २४ गायत्री की मुद्रित पुस्तक और दो चार वेदमंत्रभी लाकर प्रगट कियेथे वे कैसे हैं ।

उ. यह तो ठीक किन्तु यह जरा ध्यान देकर विचारनेकी बात है । उस हिसाबसे जो आपने २४ गायत्री देखी वो २४ वी सही नहीं वरन् अगणित हैं । क्योंकि वे देवताओंके नामसे बनाई गई हैं इसलिये देवता उतनेही नहीं हैं अगणित हैं सो उनकी गायत्री भी अगणितही

हैं। और उसी हिसावसे यदि भिन्न भिन्न जातियोंके लिये वनाई जावैं तो मनुष्योंके लिये भी असंख्य होसकतीहैं परन्तु जनेउके समय उपदेशके कामकी तो उनमेंसे एक भी नहीं है।

प्र. १७ अनेक हैं और अनेक अव भी वन सकतीहैं इसमें क्या प्रमाण है।

उ. मंत्रमहोदधि आदि मंत्रशास्त्र और पंचरात्रादि तंत्रशास्त्र इनमें जिन जिन देवी देवताओंके प्रयोगानुष्ठानादि लिखेहैं उन्ही उनकी गायत्री भी लिखी हैं सो उन्हीं ग्रंथोंमेंसे निकाल कर २४ गायत्रीमात्र अलग छपवादी हैं। इसलिये वहुत गायत्री होनेका यही दृढ प्रमाण है। परन्तु यह गायत्री वेदमाता नहीं हैं इसलिये यज्ञोपवीतमें इन्होंका उपदेश नहीं होसकताहै। अव भिन्न भिन्न जातियोंके लिये भिन्न २ प्रकारकी गायत्री और वन सक्ती हैं इसकी भी युक्ति सुनिये। ऐसी गायत्री वनानेका यह नियम है कि उसी आर्षी वेदमाता गायत्रीके समान तीन पद आठ २ अक्षरोंके वनावै जिसमें प्रथम पद तो सदैवके लिये यह (तत्पुरुषाय विद्महे) एक समानही जोडै अथवा जिस जातिकी वनावै उस जातिका पांच अक्षर युक्त चतुर्थ्यन्त नाम रखके उसके आगे विद्महे जोड़ दे सो प्रथमपद वन जायगा। ऐसेहीं उसी जातिका नाम (दूसरा) पांच अक्षरका ही चतुर्थ्यंत रख कर आगे धीमहि जोडदे सो दूसरा पद वन जायगा और फिर उसी जातिका तीसरा नाम प्रथमांत दो अक्षरका

जिसके आदिमें तन्नो और अन्तमें प्रचोदयात् जोड दे तो तीसरा पद बन जायगा। इस प्रकार अभिलषित जातिकी गायत्री तैयार होजायगी। उदाहरणके लिये एक दो नमूना लीजिये। यथा अग्रवालोंमें गर्गगोत्तियोंकी—

"वैश्यवर्णाय विद्महे अग्रवालाय धीमहि।
तन्नो गर्गः प्रचोदयात्"

यह वैश्यजातिकी और सरावगियोंमें सेठियोंकी—

"तत्पुरुषाय विद्महे जैनधर्माय धीमहि।
तन्नो श्रेष्ठी प्रचोदयात्"

यह जैनियोंकी बस् इसी प्रकार अनंत जातियोंकी अनंतानंत गायत्री बना लीजिये इसमें कोई नियम नहीं है।

प्र. १८ अच्छा इस प्रकार बनाई हुई गायत्री किसी कामकी भी है कि नहीं !

ऐसे जो देवताओंके सिवाय जितनी गायत्री बनाई जांय वे किसी कामकी नहींहैं। येतो केवल आप को उनकी कपटचर्चा प्रत्यक्ष दिखलानेके लिये लिखदीहैं।

प्र. १९ अच्छा यह भेदप्रकरण समाप्त होचुका कि और भी कुछ शेष है।

उ. हाँ केवल इतनासा है कि आचमनमें जलकी न्यूनाधिकता कीजातीहै।

यथा मनु अ. २ श्लो. ६२—

हृद्गाभिः पूयते विप्रः कंठगाभिस्तु भूमिपः
वैश्योऽभि प्राशिताभिस्तु० इति

अर्थात् ब्राह्मण अपने हृदयपर्यंत पहुंचै इतना आचमनमें जल ले क्षत्रिय कंठतक जाय इतना ले और वैश्य तालवे तक जाय इतना जल ले। बस् केवल यही एक जलका भेद है और संध्या गायत्रीमें कहीं कुछ भी भेद नहीं है।

प्र. २० अच्छा इनके सिवाय संध्या करनेकी यह प्रचलित रीति है यही उत्तम है कि इसमें कुछ भेद है।

उ. इसमें कई एक बातोंमें गड़बड़ है उनको हम संक्षेपसे बतलातेहैं। प्रथम तो कई आदमी किसी कारणविशेषसे कभी स्नान नहीं करने पातेहैं उस दिन वे संध्याभी नहीं करतेहैं। यह उनकी भूल है। स्नान चाहै न भी करैं किन्तु संध्या विना स्नान किये भी अवश्य करना चाहिये। यदि तीन दिवस भी सन्ध्या न करै तो शूद्र होजाताहै इसलिये—

"शुचिर्वाप्यशुचिर्वापि काले संध्यां समाचरेत्"

अथवा

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

स्नान कियाहो वा न कियाहो भगवान्का स्मरण करके समय पर संध्या करही ले। परन्तु यह प्रमाण स्नाना- शक्त पुरुषों (स्नान करनेमें असमर्थ पुरुषों) के लिये है। अन्यके लियें नहीं क्योंकि स्नान करनेंका वड़ा भारी माहात्म्य है। दूसरे विनियोगके समय जो चमचियां भर २ के छोड़तेहैं यह भी भूल है विनियोगका मतलब है कि उन ऋषिदेवछन्दोंका स्मरण करना वस् जलकी चमचियां छोड़नेका केवल गड़ारिया चाल है। तीसरे प्राणायाममें प्रथमारम्भ वामस्वरसे चढ़ाना चाहिये क्योंकि यह स्थिर स्वर है इसीमें चढ़ाया हुवा वहुत समय ठहर सकता है सो इसीसे चढ़ावै। यदि अधिक प्राणायाम करनेहों तो दूसरा दहिने तीसरा वायें चौथा दहिने इसी क्रमसे चढ़ावै। चोथे द्रुपदादिव० इस मंत्रसे जल लेकर जो कोई आदमी देखकरही और कई सिरके पास लेजाकर फेंक देतेहैं यह भी भूल है। इस जलका यह प्रयोजन है कि द्रुपदा० इस मंत्रको ३ वार पढ़कर उस जलको शिर पर पटकलें इससे सौत्रामणि यज्ञका फल होता है। पांचवें सूर्यको अर्घ्य देते समय कईतो एक कई तीन और कई प्रायश्चित्तार्थ चार अर्घ्य देतेहैं। परंतु एकतीनाविकल्पसे और आचारादर्शमें केवल अर्घ्यदेनेकों लिखाहै सो देनेवालेकी इच्छा है।

छठे । न्यासोंमें हृदयादि अंगोंमें जो हाथ लगातेहैं यह श्रुति स्मृतियों से विरुद्ध है । क्योंकि नमः स्वाहा स्वधा वषट् वौषट् फट् यह सब चतुर्थी विभक्तिके साथ रहतेहैं । और चतुर्थी विभक्ति दान तथा नमस्कार के प्रयोगमें आतीहै इसलिये हाथ लगानेकी कोई जरूरत नहीं, हाथ जोड कर ध्यान करलेना चाहिये । यदि वे हाथ लगानेहीको नमस्कार समझें तो एक हाथके अभिवादनका स्मृतिकारोंने दोष लिखाहै । सातवें । कई यह कहतेहैं कि—

"यो हि मुद्रा न जानाति तस्य संध्या च निष्फला"

अर्थात् जो आठ या २४ मुद्रा न जानें उनका संध्या करना निष्फल है यह उनकी भूल है। क्योंकि मुद्रा वेद और स्मृतियोंसे विरुद्ध हैं । इसलिये मुद्रा सीखनेकी कोई जरूरत नहीं । आठवें कई एक भूतशुद्धि विना किये सब कर्म निष्फल समझते हैं । परन्तु यह तांत्रिक है इसलिये इसमें इसकी कोई जरूरत नहीं । क्योंकि सन्ध्या वैदिक कर्म है । नवें कई यह कहतेहैं कि आशौच आदिमें सन्ध्या तो अवश्य करना परन्तु सूर्य को अर्घ्य न देना । किन्तु आशौच आदिमें विलकुल न करना चाहिये । क्योंकि जावालि ऋषि लिखतेहैं कि-

सन्ध्यां पंच महायज्ञान्नैत्तिकं स्मृतिकर्म च ।
तन्मध्ये हापयेत्तेषां दशाहान्ते पुनःक्रिया ॥

सन्ध्या, पंचयज्ञ और श्रौत स्मार्त कर्म आशौचके बीचमें कदापि नहीं करना चाहिये । आशौचसे निवटे बाद सन्ध्यादिकर्म करने चाहियें । ऐसे अवसरमें संध्या न करनेका दोष नहीं । जो आशौचमें सन्ध्या कर लेतेहैं वे प्रायश्चितके भागी होतेहैं । दशवें किसी मौके पर जल आदि सन्ध्याके उपयोगी सामग्री न मिले तो उसके सिवाय और सब सन्ध्याकर्म ज्योंका त्यों करना चाहिये और जलके आचमनकी जगह दहिने कर्णका स्पर्श, मार्जनकी जगह शिरका स्पर्श और सूर्यार्घ्यकी जगह वद्धांजलि (हाथ जोड़) कर मन्त्रपाठ करना चाहिये । और गायत्री जप करमाला से ही करना क्योंकि गायत्री वेदमाता है और अंगुलियोंमें पर्व १० हैं इससे पर्वोंमें वेदमाता का जप करना अधिक पुण्य है (जो अनामिकाके मध्यपर्वसे आरम्भ कर तर्जनीके मूल पर्व तक समाप्त करना । इस प्रकार नित्य कर्म समाप्त करना) ।

प्र.२१ इस प्रकरणके सुननेसे मैं इस विषयमें तो निर्भ्रम हो-चुका परन्तु अब मुझे दो एक बातें और पूछनी हैं सो कहिये जो आपने ऊपर गर्भाधानादिका विधान बतलाया सो क्या हम वैष्णव वैश्यों (श्रौत स्मार्त स-दाचारियों) के लियेही बतलाया है अथवा जैनधर्मानु-यायी सरावगी, ओसवाल वैगरह वैश्य हैं उनके लिये भी ? । मैं यह बात इस कारण पूछताहूँ कि उपरोक्त बातें हमारेमें तो कुछ हैं भी परन्तु उन लोगोंमें बिल-

कुल नहीं देखते हैं सो कहो।

उ. यह पूछा सो तो ठीक है परन्तु उन लोगोंमें यह बातें आपको नहीं दीखतीहैं इसमें या तो आपकी दृष्टिका दोष है या वे आस्थारहित हो कर नहीं करते होंगे नहीं तो देखिये उनके लिये इतना लिखा है। आदि-पुराणजीकी ३८ वीं सन्धि में—

आधानाद्यास्त्रिपंचाशत् ज्ञेया गर्भान्वयक्रियाः।
चत्वारिंशद्‌थाष्टौ च स्मृता दीक्षान्वयक्रियाः॥ १॥
कर्त्रन्वयक्रियाश्चैव सप्ततज्ज्ञैः समुच्चिता।
तासां यथाक्रमं नाम निर्देशोऽयमनुद्यते॥ २॥
आधानं १ प्रीति २ सुप्रीति ३ धृति ४ मोदः ५ प्रियोद्भवः।
नामकर्म, ७ बहिर्यानं ८ निषद्या ९ प्राशनं १० तथा॥ ३॥
व्युष्टि ११ श्च केशवाप १२ श्च लिपिसंख्यानसंग्रहः १३।
उपनीति १४ र्व्रतचर्या १५ व्रतावतरणं १६ तथा॥ ४॥
विवाहो१७ वर्णलाभ१८ श्च कुलचर्या १९ गृहीषिता २०।
प्रशांति२१ श्च गृहत्यागो२२ दीक्षाद्यं२३ जिनरूपता२४॥

इत्यादि गर्भाधानादि ५३ संस्कार (क्रिया) करने चाहिये और ४८ अडतालीस दीक्षादि संस्कार और ७ कर्त्रन्वय क्रिया इस तरह सब मिलकर १०८ क्रिया (संस्कार) उनको करने चाहिये जिनके यथाक्रम नाम ये हैं। १ आधान २ प्रीति (पुंसवन) ३ सुप्रीति (पचमासा) ४ धृतिः (सीमन्तोन्नयन) ५ मोद (वि-ष्णुबली) ६ प्रियोद्भव (जातकर्म) ७ नामकर्म ८ ब-

हियान (निष्क्रमण) ६ निषद्या (पयःपान) १० अ-न्नप्राशन ११ व्युष्टि (वर्द्धापन) १२ केशवाप (जड़ूला) १३ लिपिसंख्यानसंग्रह (अक्षरारम्भ) १४ उपनीति (जनेऊ) १५ व्रतचर्या (वेदारम्भ) १६ व्रतावतरण (समावर्तन) १७ विवाह इत्यादि त्रेपन संस्कार करै वह सच्चा जैनी कहा सक्ताहै यदि ये बातें आप उनमें नहीं देखते हैं तो जैसे आपमें न करनेवाले अधर्मी हैं वैसेही उनकोभी जानों । इस विषयका अधिक विवरण किसीको देखना हो तो आदिपुराण त्रिवर्णाचारादि देखो और ऐसेही श्वेताम्बरों (जैनी ओसवालों) के वर्द्धमानसूरिकृत आचारदिनकरादि ग्रन्थोंमें भी उनके षोडश (सोलह) संस्कार लिखेहैं । श्लोक—

गर्भाधानं १ पुंसवनं २ जन्म ३ चन्द्रार्कदर्शनम् ॥
क्षीराशनं ५ चैव षष्ठी ६ तथा च शुचिकर्म ७ च ॥ १ ॥
तथा च नामकरणं ८ अन्नप्राशन ९ मेव च ॥
कर्णवेधो १० मुण्डन ११ ञ्च तथोपनयनं १२ परं ॥ २ ॥
पाठालंभो १३ विवाह१४ श्च व्रतारोपो १५ ऽन्तकर्म १६ च ।
अमी शोडश संस्काराः गृहीणां परिकीर्तिताः ॥ ३ ॥

यथा १ प्रथम गर्भाधान २ पुंसवन (सीमतोन्नयन) ३ जातकर्म ४ निष्क्रमण (तीसरे दिन) ५ दुग्धपान ६ षष्ठी देवीकी पूजन ७ शुचिकर्म दसवें दिन ८ नामकर्ण ९ अन्नप्राशन १० कर्णवेध ११ जड़ूलो १२ उपनयन (जनेऊ) १३ वेदारंभ (पाठालंभ) १४ विवाह १५ व्रतारोप १६ अन्तेष्टी ये उनको भी करने चाहियें यदि

च वेलोग नहीं करते हैं तो वे और संस्कार न करैं तो आप हम सवही अस्पृश्य अर्थात् पातकी इस—

बौद्धान् पाशुपतान् जैनान् लोकायतिककापिलान् ।
विकर्मस्थान् द्विजान् स्पृष्ट्वा सचैलो जलमाविशेत् ॥

आचारमयूखके श्लोकके अनुसार ठहरैंगे याने ऐसे मनुष्योंसे जो कोई स्पर्श हो (भिट) जाय तो कपड़ों सहित स्नान करै तव शुद्ध हो यह संस्कार रत्नसागर, आचाररत्नाकरदीपिका वगैरहमें लिखे हैं इससे उनकोभी चाहिये कि सब संस्कार जनेउसहित करके धर्मी वनैं नहीं तो उनके अधर्मी कर्महीन होनेमें क्या सन्देह है ।

२२ इन सब वातोंके कहनेमें तो आपने बहुत ही परिश्रम कर मुझको निर्भ्रम कर दिया परन्तु कितने ही विद्वान् यह कह रहेहैं कि कलियुगमें केवल ब्राह्मण और शूद्रके सिवाय मध्यके क्षत्रिय वैश्य दोनोंहीं वर्ण नहीं हैं जिसमें प्रमाण भी भागवत विष्णुपुराणादिके निम्न लिखित वतातेहैं । यदि ऐसा ही हो तो आपका उपरोक्त मण्डन सब निष्फल ही हुवा । देखो यह प्रमाण संस्कृतचन्द्रिका के दशम खण्ड की (७-८-९-१०) संख्या जो संवत् १९६० में मुद्रित हुई उनमें

कलावाद्यन्तयोः स्थितिः इति ।

शनैः शनैः क्रियालोपादथता वैश्यजातयः ।
कलौ शूद्रत्वमापन्ना यथा क्षत्रा यथा विशः ॥ २ ॥

यम भी

युगे जघन्ये (कलौ) द्वे जाती ब्राह्मणः शूद्र एव चेति ॥ ३ ॥

अर्थात् कलियुगमें आद्य वर्ण (ब्राह्मण) और अन्त्य-वर्ण (शूद्र) ही मौजूद रहैंगे ॥ १ ॥ शनै २ (धीरे २) क्रिया (जातकर्मादि षोडश संस्कार) लोप होनेसे कलियुगमें शूद्र होजाँयगे वैश्य और क्षत्रिय वैश्य तीनों ही जाति ॥ २ ॥ सबसे छोटे युग (कलि) में ब्राह्मण और शूद्र दोहीजाति रहैंगी ॥ ३ ॥ इन प्रमाणोंके अनुसार क्षत्रिय वैश्योंका अभाव क्या सत्य ही होचुका और व्यासस्मृति प्रथमाध्यायके (११—१२) श्लोकके—

वणिं १ किरात २ कायस्थ ३ मालाकार ४ कुटुम्बिनः ५ ।
वरटो ६ मेद ७ चण्डाल ८ दासः ९ श्वपच १० कोलकाः ॥
एतेऽन्त्यजाः समाख्याता ये चान्ये च गवाशनाः ।
एषां संभाषणात् स्नानं दर्शनादर्कवीक्षणमिति ॥ १२ ॥

अनुसार वणिक् किरातादि ११ ग्यारह जाति ऐसे नीच (अन्त्यज) होगये कि जिनसे बोलें सो स्नान करै और इनको देखै सो सूर्यके दर्शन करै तव पवित्र हो यह वात सत्य है तो ये वैश्य (वणिक्) कौन हैं ।

उ. यह वाक्य किसीके घडंत किये हुवे दीखतेहैं इस कारण इनका उत्तर देना उचित तो नहीं है परन्तु उत्तम ग्रन्थों

और पुरुषोंके नाम पर लिख दिये इससे उत्तरभी देना ही पडाहै। देखिये सृष्टिके आदिसे जो वर्णव्यवस्था वेद-स्मृतिपुराणानुसार सिद्ध है वह सृष्टिके अन्त तक रहैगी क्योंकि प्रथमतो वेद ही लिखताहै संध्यामें कि—

धाता यथापूर्वमकल्पयत्।

ब्रह्माजी जैसी सृष्टिके अन्तमें वर्णव्यवस्था थी वैसीही सृष्टिकेआरम्भमें भी बनाता हुआ. इस वेद वचनसे तो यह सिद्ध हुआ कि प्रलयके समय तक वैश्यवर्ण था तब जगदारम्भसमयमें ब्रह्माजी वैश्यवर्ण बनाके वेदोंमें वर्णन किया तो अबभी अन्त तक रहैहीगा अभाव नहीं होगा। दूसरे—

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥

इस यजुर्वेद संहिताकी ३१ वीं अध्यायके ११ मन्त्रसे तथा १४ अध्यायके ३० वें मन्त्रसे ये सिद्ध है कि विराट्भगवान्की दोनों जंघाओंसे अर्थात् नाभिके नीचेके और घुटनोंके उपरिभागसे जोकि अ. १ श्लो. १३ मनुजी राजा सबवर्णोंके ब्राह्मण उपदेश करै, क्षत्रिय उस उपदेशका पालन करावै और शूद्र उन वर्णोंकी नौकरी करै उन तीनों वर्णोंको मनु अध्याय. १ श्लो. ६० के अनुकूल वैश्य धनादि देवै अर्थात् दान यज्ञ, पढानेके जरिये ब्राह्मणोंको खेती व्यापार व्याज आदिका हांसिल वगैरहके जरियेसे क्षत्रियोंको और नौक-

रीकी तनखाहके द्वारा शूद्रोंको देवै । इस लिखनेसे यह सिद्ध हुवा कि परमेश्वरका ऊरुभाग अङ्ग और कमाऊ पूत खजानची वैश्यही हुवा जब कि वैश्य नहीं रहे तो क्या परमेश्वर अङ्गहीन और खजाने विना दरिद्री बन गया या इस अङ्गके भागी ब्राह्मण शूद्रोंमेंसे किसीको बनाय उनको ही खजानची बनालिया यदि ऐसा ही किया होय तो प्रमाण भी उनसे पूछना चाहिये कि किसको किया और वे प्रमाण कौनसे वेदमें किस अध्याय ऋचामें लिखाहै । तीसरे मन्वादि स्मृतिकार भी इसही अनुसार लिखके वैश्योंका नाना प्रकारका धर्म कर्म लिखतेहैं और उन्होंने यह नहीं लिखा कि कलियुगमें वैश्य नहीं हुए या होंगे तो सही परन्तु २८ वें कलिके ५००० पांच हजार वर्ष गये बाद लुप्त होजाँयगे सो लेख कहीं भी मनुमें नहीं मिलताहै । चौथे वे यों कहें कि मनुजी कलिधर्म क्यों कहते थे इस–

कृते तु मानवा धर्मास्त्रेतायां गौतमाः स्मृताः ।
द्वापरे शंखलिखिताः कलौ पाराशरोदिताः ॥

स्मृतिके अनुकूल मनुजीमें जो धर्म हैं वे सब सतयुगी हैं । ऐसेही त्रेताके धर्म गौतमजीनें कहा, द्वापरके शंख-ऋषि और लिखित ऋषीने धर्म कहे तदनुकूल कलि-युगके धर्म जो पाराशरमुनी अपनि पाराशरस्मृतिमें कहे हों सो मानना चाहिये नकि सतयुगी मनुमहाराजका तो

उनसे प्रथम तो यह पूछा जाय कि मनु इस कालिमें रहा-ही क्यों दूसरे पडा गिरा कहीं रह भी गया सही परंच उस के हुक्मोंसे अदालतोंमें अब (कालिमें) भी फैसले क्यों होतेहैं। सो यह मनुजी आपही अ. श्लो.

अश्वमेधं १. गवालंभं २ संन्यासं ३ पलपैतृकं ४ ॥
देवराच्च सुतोत्पत्तिः कलौ पंच विवर्जयेत् ॥

इत्यादिवचनोंसे कालिधर्म क्यों कहे और कहेतो वैश्यों का अभाव भी क्यों नहीं लिखा क्या पाराशरजीके वास्ते छोड गये खैर अब जो पाराशरजीका आधार लेवैं तो लो। उसमेंभी वैश्यवर्णके सब धर्म लिखेहैं। देखो अलीगढ़के भारतबंध, छापाखानेमें सन् १८६१ की छपी हुई अष्टादश स्मृति में जो पराशरस्मृति हैं उसके अध्यायांकमें श्लोकांक-

मानुषाणां हितं धर्म्मं वर्त्तमाने कलौ युगे।
शौचाचारं यथावच्च वद सत्यवतीसुत ! ॥ १-२
लाभकर्म तथा रत्नं गवाञ्च परिपालनम्।
कृषिकर्म च वाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ २ ॥ १-७०
वैश्यः शूद्रस्तथा कुर्यात् कृषिवाणिज्यशिल्पकम्। २-१६
वैश्यः पंचदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति। ३-४
एवञ्च वैश्यमज्ञानात् ब्राह्मणो ह्यनुगच्छति।
कृत्वा शौचं द्विरात्रञ्च प्राणायामान् षडाचरेत् ॥ ३-४९
वैश्यं वा क्षत्रियं वापि निर्दोषं योऽभिघातयेत्।
सोऽतिकृच्छ्रद्वयं कुर्यात् गोविंशद्दक्षिणां ददेत् ॥ ६-१७

वैश्यं शूद्रं क्रियासक्तं विकर्मस्थं द्विजोत्तमम् ।
हत्वा चांद्रायणं तस्य त्रिंशद्गाश्चैव दक्षिणाः ॥ ६-१८
क्षत्रियेणापि वैश्येन शूद्रेणैवेतरेण च ।
चांडालस्य वधे प्राप्ते कृच्छ्रार्द्धेन विशुध्यति ॥ ६-२०
चरेत्सांतपनं विप्रः प्राजापत्यमनंतरः ।
तदर्धं तु चरेत् वैश्यः पादं शूद्रस्य दापयेत् ॥ ६-२६
भांडस्थमंत्यजानां तु जलं दधि पयः पिबेत् ।
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चैव प्रमादतः ॥ ६-३०
ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनां तु निष्कृतिः ।
कृमिरुत्पद्यते यस्य प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ।
गोदक्षिणां तु वैश्यस्य चोपवासं विनिर्दिशेत् ॥ ६-५०
स्पृष्ट्वा रजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी वैश्यजां तथा ।
पादहीनं चरेत् पूर्वा पादमेकमनन्तरा ॥ ७-१५
सचैलं वाग्यतः स्नात्वा क्लिन्नवासाः समाहितः ।
क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा ततः पर्षद्माव्रजेत् ॥ ८-६
क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा चांडालीं गच्छतो यदि ।
गोद्वयं दक्षिणां दद्यात् शुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् ॥ ६-८
अमेध्यरेतो गोमांसं चांडालान्नमथापि वा ।
एकद्वित्रिचतुर्गावो दद्याद्विप्राद्यनुक्रमात् ॥ ११-३
क्षत्रियो वापि वैश्यश्च प्राजापत्येन शुध्यति । ११-७
क्षत्रियश्चापि वैश्यश्च क्रियावन्तौ शुचिव्रतौ ।
तद्गृहेषु द्विजैर्भोज्यं हव्यकव्येषु नित्यशः ॥ ११-१३
गायत्र्यष्टसहस्रेण शुद्धिः स्याच्छूद्रसूतके ।
वैश्ये पंचसहस्रेण त्रिसहस्रेण क्षत्रिये ॥ ११-१८

वैश्यकन्यासमुद्भूतो ब्राह्मणेन तु संस्कृतः ।
सहार्द्धिक इति ज्ञेयो भोज्यो विप्रैर्न संशयः ॥ ११-२५
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा उपसर्पति ।
ब्रह्मकूर्चोपवासेन याज्यवर्णस्य निष्कृतिः ॥ ११ २७
एकाहेन तु वैश्यस्तु शूद्रो नक्तेन शुध्यति ।११-४६
अज्ञानात् प्राश्य विरामूत्रं सुरासंस्पृष्टमेव च ।
पुनःसंस्कार मर्हंति त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥ १२-२.
प्राजापत्यद्वयेनैव तीर्थाभिगमनेन च ।
वृषैकादशदानेन वर्णाः शुद्ध्यन्ति ते त्रयः ॥ १२-६

टीका वर्तमान कलियुगमें मनुष्योंका हितकारी धर्माचार और पवित्रता हो सो हे ! सत्यवतीके पुत्र कहो ॥ १ ॥ लाभका काम जो रत्नादि (जवाहरात सोना आदि) से, गोपालनादिसे, खेती खानआदि वाणिज्यसे हो सो वैश्यवृत्ति (जीविका) कही है ॥ २ ॥ वैश्य और शूद्र भी खेती, व्यापार और शिल्प (कारीगरी) से जीवन करैं ॥ ३ ॥ वैश्य पंचदश (१५ पद्रह) दिन वीते वाद सोलवें दिन जन्म मरणके सूतकसें शुद्ध होतेहैं ॥ ४ ॥ जो ब्राह्मण मरे हुवे वैश्यके संग अज्ञानसे दागमें जाताहै वह दो दिन आशौच मान तीसरे दिन छैप्राणायाम करे वाद शुद्ध होताहै ॥ ५ ॥ निर्दोषी वैश्य को वा क्षत्रियको जो मारे वह दो अतिकृच्छ्र करके वीस गोदानदक्षिणा दे तव शुद्ध हो ॥ ६ ॥ कर्ममें तत्पर वैश्य वा शूद्रको और निंदित कर्म करनेवाले ब्राह्मणको जो मारे वह चांद्रायण करके तीस गोदानदक्षिणा दे

तब शुद्ध हो ॥ ७ ॥ जो क्षत्रिय वैश्य शूद्र वा अनुलोम इनमेंसे कोई भी चांडालको मारे तो अर्द्धकृच्छ्र करके शुद्ध हो ॥ ८ ॥ पहलेके श्लोकमें यह अर्थ है कि चांडालके घटका जल पीके पचा जाय तो ब्राह्मण सांतपन क्षत्रिय प्राजापत्य, वैश्य आधाप्राजापत्य और शूद्र चौथाई प्राजापत्य करके शुद्ध हो ॥ ९ ॥ यदि अंत्यजोंके घटका जल, दही, दूध अज्ञानसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, पीवैं तो ब्रह्मकूर्च उपवाससे शुद्ध हों और शूद्र पीवैतो एक उपवास पूर्वक कुछ दान करै ॥ १० ॥ यदि वैश्यके व्रण (घाव) में कीडे पड जाँय तो एक उपवास करके गोदक्षिणा दान करै तब शुद्ध हो ॥ ११ ॥ यदि रजस्वला ब्राह्मणी और वैश्या आपसमें स्पर्श हो (भिट) जाय तो ब्राह्मणी पौणकृच्छ्र और वैश्या चौथाई कृच्छ्र करै ॥ १२ ॥ जो कुछ अपराध क्षत्रिय वा वैश्य से बन गया हो तो मौनधार सवस्त्र स्नान कर गीलेही वस्त्रोंसे सावधान हो पर्षद् (धर्मसभा) में जाय ॥ १३ ॥ जो क्षत्रिय वा वैश्य चांडाली के साथ गमन करै तो दो गोदानदक्षिणा दे के शुद्ध हो ॥ १४ ॥ जो ब्राह्मणादि वर्ण अशुद्ध पदार्थ, वीर्य, गोमांस और चांडालका अन्न अज्ञानसे खाँयं तो ब्राह्मण चांद्रायण कर ब्रह्मकूर्च पी एक गोदान दे, क्षत्रिय अर्द्धचांद्रायण कर ब्रह्मकूर्च पान करके दो गोदान दे, वैश्य पादकृच्छ्र कर ब्रह्मकूर्च पी तीन गोदान दे और ऐसेही शूद्र भी प्राजापत्य कर पंचगव्य पान कर चार गोदक्षिणा दे तब शुद्ध हो ॥ १५ ॥

जो निषिद्ध अर्थात् मार्जारादिके उच्छिष्टादिसे अशुद्ध हुवा अन्न क्षत्रिय वा वैश्य खायतो माजापत्यसे शुद्ध होय ११-७ जो क्षत्रिय, वैश्य जातकर्मादि संस्कार-युक्त उत्तम आचरणवाले होंय तो उनके घरके पकाये पाकको ब्राह्मण देव पितर (यज्ञश्राद्ध) कर्ममें निसंदेह भोजन करे ११-१३ जो ब्राह्मण उत्तम शूद्र के सूतकका अन्न भोजन अजानसे कर ले तो ८००० आठ हजार गायत्री जपे से शुद्ध हो, वैश्यके सूतकान्नभोजनमें ५००० हजार, क्षत्रियके सूतकान्न भोजन करै तो ३००० हजार और ऐसेही ब्राह्मणका सूतकान्न खाय तो २००० गायत्री जपै तब शुद्ध होय ॥ १८ ॥ जो परिणीता वैश्यकन्यामें उसके पति ब्राह्मणसे पैदा हुवा पुत्र अम्बिष्ठ (जाति) होताहै उसके सब संस्कार भी होगये होंय तो उसके ब्राह्मण निःसंदेह भोजन करैं ११-२५ जिनका भोजन मना किया हो उनके पात्रोंमें रक्खा हुवा जल, दूध, घृत, दही जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वा शूद्र खाय तो द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्यों) की उपवास सहित ब्रह्मकूर्च से शुद्धि और शूद्रकी दानसे ही शुद्धि होती है ११-२७ जिस जलाशय (कूपादि) में कोई स्थली जीव या हाड चाम विष्ठादि निषिद्ध पदार्थ पडा होय और उसकी शुद्धि हुये विना जल पीवै तो ब्राह्मण तीन उपवाससे क्षत्रिय दो से वैश्य एक उपवाससे और शूद्र नक्तव्रतसे ही शुद्ध होताहै ११-४६ जो अज्ञानसे विष्ठा, मूत्र, मदिरासे स्पर्श किये पदार्थोंको भोजन करे तो ब्राह्मण क्षत्रिय

वैश्य फिरसे जनेउ लैं तब शुद्ध होंय १२-२ जो जल और अग्निमें प्राण त्याग करै अथवा सन्यासधर्म बिगाडैं तो ब्राह्मण दो प्राजापत्य क्षत्रिय, तीर्थयात्रा और वैश्य एकादश वृष (बैल) दान करै जब शुद्ध होतेहैं १२-६ अब वृहत्पाराशरस्मृतिमें भी देखिये कि चारों वर्णों की स्थिति अलग २ बताई है छापाखाने खेमराजके बंबई सं० १९५५ की छपीहुई के अध्यायांक श्लोकांक

वैश्यो वा यदि वा शूद्रो विप्रगेहं समाव्रजेत् ।
सभृत्यैः सह भोक्तव्य इति पाराशरोऽब्रवत् ॥ २-१४ ॥
क्षत्रियेणापि वैश्येन तथैव वृषलेन च ।
आतिथ्यं सर्ववर्णानां कर्तव्यं स्यादसंशयम् ॥ १६ ॥
यजनाध्ययने दानं पाशुपाल्यं तथा विशि ।
वाणिज्यं च कुसीदश्च कर्मषट्कं प्रकीर्तितम् ॥ ४ ॥
लोहकर्मरतानां तु गवाश्च परिपालनम् ।
कुसीदकृपिवाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ १० ॥
दिने चैकादशे नाम शर्म्मादिद्विजजन्मनाम् ॥ ४-४८ ॥
मुंजमौर्वशणानाश्च त्रिवृता रशना स्मृता ॥ ५१ ॥
कार्पासशणमेषोर्णान्युपवीतानि त्रिवृंति ।
पालाशवटपीलूनां दण्डाश्च क्रमशो मताः ॥ ५२ ॥
कार्ष्णांच रौरवं वास्तमजिनानि द्विजन्मनाम् ।
शिरोललाटनासांताः क्रमाद्दण्डाः प्रकीर्त्तिताः ॥ ५३ ॥
त्रिष्टुब्जगत्या गायत्र्या त्रयाणामुपनायनम् ॥ ५४ ॥
गायत्र्यामविशेषो वा मुंजादिश्चपरेषु च ।
तत्सवितुस्तां सवितुर्विश्वारूपाणि वा क्रमात् ॥ ५५ ॥

वैश्यो विप्रनृपस्त्रेषु कुर्याद्भिक्षां शुद्धये ॥ ५७ ॥
भिक्षां भवति मे देहि क्रमेणैतदुदाहरेत् ॥ ६२ ॥
अष्टरुद्रार्कवर्षाणि सगर्भाणि द्विजन्मनाम् ॥ ६६ ॥
द्विगुणाब्दे तु कर्तव्या क्रमादुपनतिर्द्विजे ॥ ६७ ॥
षोडशाब्दानि विप्रस्य द्वाविंशति नृपस्य च ।
चतुर्विंशति वैश्यस्य वासास्ते स्युरतः परम् ॥ ७४ ॥
अमृतं ब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियान्नं पयः स्मृतम् ।
वैश्यस्य त्वन्नमेवान्नं शूद्रस्य रुधिरं स्मृतम् ॥ ४ ॥
क्षत्रियस्य सुतश्चैव तथा वैश्यसुतोऽपि वा ।
श्रुतान्नेन द्विजांस्तर्प्य श्राद्धद्वयं च निर्वपेत् ॥ ५६ ॥
वैश्यं हत्वा द्विजश्चैतदब्दमेकं व्रतं चरेत् ।
शतमेकं गवां दत्वा चरेच्चांद्रायणानि च ॥ १५ ॥
विना यज्ञोपवीतेन भोजनं कुरुते यदि ।
अथ मूत्रपुरीषे वा रेतःसेचनमेव वा ॥ ८८ ॥
त्रिरात्रोपोषितो विप्रः पादकृच्छ्रं तु भूमिपः ।
अहोरात्रोषितो वैश्यः शुद्धिरेषा पुरातनी ॥ ८६ ॥

टीका—जो भोजनके समय ब्राह्मणके घर पर अतिथि रूपसे वैश्य वा शूद्र आजाय तो उन्हों को भृत्यों (नौकरों) की साथ भोजन करादे ॥ १४ ॥ क्योंकि क्षत्रिय हो वैश्य हो या शूद्र हो सब वर्णोंका ही आतिथ्य (सत्कार) नियमसे करना ॥ १६ ॥ यज्ञ करना वेद पढना २ दान करना गवादिकीपालना करना ४ व्यापार करना ५ व्याज वाढी लेना ६ वैश्योंका कर्म और जीविका है ॥ ४ ॥ धातु सोना चांदी आदि जवाहरातका

व्यापार १ रथादिका व्यापार २ गोवृषभादिका पालन ३ सूद लेना ४ खेतीकरना ५ और वणिज ६ वृत्ति वैश्योंकी है १० एकादश ग्यारवें दिन ब्राह्मणादिकों का शर्मादि नामकर्म करना अर्थात् ब्राह्मणके नामके अन्तमें शर्मा पद हो, क्षत्रियके नामके आगे वर्मा हो ऐसे ही वैश्यके आगे गुप्त पद हो और शूद्रके आगे दास पद होना चाहिये ॥ ४८ ॥ ब्राह्मणादि तीनोंव- र्णोंका यज्ञोपवीत हो जब ये चीजें क्रमसे हों अर्थात् ब्राह्म- णके मूंजकी, क्षत्रियके उरुकी और वैश्यके शणकी तीन लडकी मेखला हो ॥ ५१ ॥ ब्राह्मण कपासकी, क्षत्रिय सणकी वैश्यके ऊनकी जनेउ हो । ब्राह्मण छीला, क्षत्रियके वट, वैश्यके पीलूका दण्ड हो ॥ ५२ ॥ काले हिरणकी ब्राह्मण, गौरहिरणकी क्षत्रिय, बकरेकी चर्म वैश्यके हो । सिरतक बडा ब्राह्मणके ललाट तक क्षत्रियके नासिका (भवारों) तक वैश्यके दण्ड हो ॥ ५३ ॥ त्रिष्टुप्छंद ब्राह्मणके, जगतीछंद क्षत्रियके, गायत्रीछंद वैश्यके उपदेश हो ॥ ५४ ॥ अथवा तीनोंही वर्णों (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य) को गायत्री मन्त्र ही उपदेश करना जिसका विवरण द्वितियाध्यायके ९ वें पत्रसे १२ पत्रतक १०९ श्लोकोंमें कियाहै । अथवा—

तत्सवितुर्वृणीमहे इत्यादि	ब्राह्मणको
तांसवितु इत्यादि	क्षत्रियको
विश्वाम्पाणि इत्यादि	वैश्यको

परंच धर्मसिंधु आदिके देखनेसे यह तीसरे दरजेका उपदेश किसीको मरा हुवा समझले और बाद वो जीता आजाय तब उसके पुनः संस्कार करै जिसवक्त करना प्रथम संस्कारमें प्रथम वा द्वितिय पक्षही ठीक है ५५ वैश्य जनेउके वक्त भिक्षा ब्राह्मण क्षात्रि वा वैश्यसें ही याचे (मागे) ५७ उस वक्त··
भिक्षां भवति मे देहि अथवा भिक्षां देहि भवति ऐसा शब्दोच्चारण करे ॥ ६२ ॥ ८ वर्षमें ब्राह्मण, ११ वें वर्षमें क्षात्रिय, १२ वें वर्षमें वैश्य अथवा १६ वर्ष तक ब्राह्मण, २२ तक क्षत्रिय २४ वर्ष तक वैश्य जनेउ लेवै इसके बाद व्रात्य होतेहैं ६७-७४ ब्राह्मणका अन्न भिक्षामें आवेसो अमृत, क्षात्रियका अन्न दूध वैश्यका अन्न अन्न और शूद्रका अन्न रुधिरके समान होताहै ४ सदाचारी क्षत्रिय और वैश्य आपके हाथसे पकाया हुवा (चांवल चूरमा आदि नखरे पुरी कचोरी आदि सखरे) अन्नसे ब्राह्मणोंको जिमाय पिंडदानान्त एकोद्दिष्टपार्वण दोनों श्राद्ध करै ५६ वैश्यको मारनेवाले ब्राह्मण प्रायश्चित्तरूप १ वर्षका व्रत सविधि रास चांद्रायणव्रत कर १०० सौ गोदान करै १५ जो विना यज्ञोपवीत (जनेउ) के भोजन अथवा मूत्रत्याग वा पुरीषोत्सर्ग (पखाने जाय) या स्त्रीसंग करै तो ब्राह्मण तो तीन उपवास, क्षात्रिय दोय और वैश्य एक उपवास करै तब शुद्ध हो ८६ इन दोनोंही (पाराशर वृहत्पाराशर) स्मृतियोंमें २३ और २० प्रमाणोंसे वैश्यों के धर्मकर्मनिर्णयार्थ लिखेहैं तो कहो फिर वैश्यवर्णका अभाव कलिमें कैसे सिद्ध होसक्ताहै और यदि वे सज्जन यह कहवैं कि व्यास-

जीने पुराणोंमें क्योंलिखा तो उनसे यहभी कहना चाहिये कि व्यासजी जो पुराणोंमें वैश्योंका अभाव ही लिखते तो आपकी स्मृतिमें वैश्यधर्म क्योंलिखते देखो व्यासस्मृति अध्याय १ श्लोक ५-८-१६-२०-२१ अ २ श्लो- १० अ-३ श्लो ५७ में ऐसे कई जगहे व्यासजी वैश्य धर्म मुक्तकंठ होकर लिखतेहैं तो कहो वेही व्यासजी पुराणोंमें और स्मृतियोंमें क्या अटपट लिख सकतेथे कदापि नहिं। अब रहा विष्णुपुराणका श्लोक जिसकी यह वजह है कि वोही विष्णुपुराण लिखता है कलिमें वैश्यधर्म वैश्योंके जातकर्मादि संस्कार और देखो विष्णुस्मृति अध्याय १ श्लो ८-१४ अ० ५ श्लो १०५ से १०७ तथा ११२ में साफ २ वैश्यधर्म लिखा हुवाहै तो कहो कि विष्णुजी पुराण और स्मृतियोंमें वैश्यधर्म कलियुगमें लिखते २ सिरफ एक जगह चुपसे अभाव भी क्षत्रियवैश्योंका लिख जाते तो कहो डर किसका था सो नहिं। यहक्षत्रियवैश्योंके अभाव जनक श्लोक किसी दुराचारी महात्माके घडे हुये जडे गयेहैं

अब थोडी देरके लिये और वातोंको छोडइन श्लोकोंको व्यासदेवजी का ही बनाया हुवा मान लो तो इनके अर्थ पर ध्यान देना चाहिये अर्थ "शनैं शनैं क्रिया (जातकर्मादि १६ संस्कार) लोप होने से कलियुगमें वैश्य और क्षत्रियवैश्य दोनोंवर्ण शूद्र होजायँगे, इन श्लोकोंका अर्थ यहहुवा सो सुनिये प्रथम तो इन श्लोकोंमें कलियुगका सं-

रुयावाचक नाम नहिं लिखा कि अमुक कलियुगमें या २८
वां इसही कलियुगमें क्षत्रिय वैश्योंका अभाव होजायगा
जो यह नहिं लिखा तो निश्चय हुवा कि इस कलिमें तो व-
र्णाधर्म नहिं लोप होगा क्योंकि कितने ही वर्षोंसे काशी-
जी आदिके पंडित पंचांगोंमें गंगालोप लिखते आतेथे
कि विक्रमाब्द सं- १९५६ में गंगालोप होगा और इसमें
प्रमाण सनत्कुमारसंहिताका यह

कलेर्दश सहस्राणि विष्णुस्त्यजति मेदनीम् ।
तदर्द्धं जान्हवीतोयं तदर्द्धं ग्रामदेवताः ॥

देतेथे जिसका अर्थ यह हुआ कि कलियुगके १०००० दस हजार वर्ष बीते भगवान पृथ्वीका त्याग करेंगे और ५००० पांच हजार वर्ष बीते गंगाजल लोप होगा ऐसेही २५०० अढाई हजार वर्ष बीते गावोंके देवता गावों (जमीन) को छोड वैकुंठ वास करेंगे,, तो अब देखो गावोंमें भैरव देवी क्षेत्रपालादि देवता मौजूद ही हैं और प्लेगादि उपद्रवोंमें राज रैय्यत मिल के बलिदा-नादि करतेहैं । दूसरे गंगाजल भी मौजूद है जिससे कई अधमोंका उद्धार प्रतिदिन होताहै और राजा महाराजा नित्य प्रति उसकी उपासना करतेहैं और वर्ष ५००० पांच हजारसे भी ज्यादा जाचुके तो कहना पडेगा कि उनश्लोकोंका हुक्म इस कलियुगके वास्ते नहिं है और ऐसे ही मनुजीको जो श्लोक हैं कि अश्वमेध १ गवालंभ २ संन्यास ३ पलयुक्तश्राद्ध ४ और देवरादिकोंसे सं तान पैदा करना यह पांच बात कलियुगमें मना दी

हैं (नहिं करनी चाहिये) सो भी देखो जयपुरके महाराज बडे सवाई जयसिंहजीने अश्वमेध यज्ञ किया जिनका कलिमें अभाव बताते हैं ।

गवालंभका मंत्र पाठादि सब क्रिया हरेक विवाहमें द्विजातिमात्रके होती ही है २ संन्यासी काशी आदि उत्तम २ स्थानोंमें होतेहैं हालमें ३ मांसयुक्त श्राद्ध कन्नोज कश्मीर बंगाल आदि देशोंमें मांसभक्षियोंके प्रसिद्ध होताहै ४ और देवरादिकसे स्थाई होकर संतान पैदा करानाभी शूद्रोंमें जगत्प्रसिद्ध है ५ इनका प्रचार न देखकर इस अर्थको युगांतरके लिये मानना पडैगा तो अब यह विचार होगा कि किस कलियुगके लिये यह हुक्म था या है जब ऐसी अवस्थामें वे श्लोक ठीक स्पष्टरूपसे हुक्म दे रहेहैं। जो कि उसही संहितामें अभाव बोधक श्लोकोंके आगे लिखेहैं यथा यम —

युगे जघन्ये (अन्तिमे कलौ) द्वे जाती ब्राह्मणः शूद्र एव च वर्णधर्मविहीना भूर्भविष्यत्यान्तिमे कलौ २ इत्यादि)

कि अंतिम कलियुग याने ७१ वां कलियुगमें धीरे २ जातकर्मादि संस्कारोंके लोप होनेसे क्षत्रिय वैश्योंका लोप होजायगा इससे पृथ्वी वर्णों (क्षत्रिय वैश्य) के धर्मसेभीहीन होगी और उसही अंतिम कालिमें अश्वमेधादि ५ पांचकर्म मनुजीके वर्जित भी नाहिं होंगे और देखो धर्मसिंधु आदि ग्रन्थोंमें जो कालियुगमें निषेध

प्रकरण लिखाहै उसकी भी इस कलियुगमें इजरा नहिं है क्रमसे एक एक पर निगाह देवें १. जहाजमें बैठकर समुद्र पर यात्रा. उ. कलकत्तेसे जगन्नाथजी, आसाम, ब्रह्मा, रंगूनादि देशोंमें और ऐसेही बंबई आदि अनेक बंदरों से अनेक टापुओंमें जातेहैं व्यापारादि कामोंके वास्ते और उनको कोई भी जातिबाहरकी सजा नहीं देता किंतु अधिकादर करतेहैं २ कमंडलधारणकरना. उ. संन्यासी आदि कइ महात्मा विद्वान् ब्राह्मणादि कमंडलकाशी आदि उत्तम उत्तम स्थानोंमें रखतेहैं ३ और ऐसेही वानप्रस्थाश्रम ४ नैष्ठिक ब्रह्मचर्य्य ५ मद्यपान ६ उत्तरकी यात्रा ७ महापातकीके संसर्गी (साथी) का त्याग एक पिताके पुत्रोंमें विषमविभाग १० इत्यादि मनाहै उत्तर निर्मलदास, भरतदास, भारतीबाबा आदि वानप्रस्थ मौजूदमें ४ रामानुजसंप्रदायी माध्वीय, आदि जो जनेउ लेकर आजन्मही (नैष्ठिक) ब्रह्मचर्य रखतेहैं ५ दूसरे वर्णमें मद्यपान प्रसिद्ध है ६ बद्रीनारायण गंगोत्तरी आदि उत्तरकी यात्रा भी होतीहै, ७ पातकी (जातिबाहर) की साथ खानपान कर लेवे उसका भी जातिसे त्याग होताही है। एक ताजीमी (गद्यस्थ) के दो पुत्र होंगे तो वडेको वडा भाग और छोटेको छोटा (विषम) भाग मिलता ही है और निषेधक वचन नहीं माने जातेहैं तो कहिये कि क्षत्रिय, वैश्य वर्णके अभाववोधक श्लोक इस कलिमें कैसे माने जायँगे यदि च उनके हठसे माने भी जांय तो प्रलयके नजदीक जो

७१वां कलियुग आंवेगा उसमें उपर्युक्त सव ही हुक्मों की तामील होगी जब क्षत्रिय, वैश्य वर्णका भी अभाव मान लेना परंच इस २८ वां कलियुगमें कोई भी प्रमाण व युक्तियां नाहिं मिलतीहैं कि जिनसे वैश्यों-का अभाव मान लिया जाय।

बस् अब एक व्यासस्मृति अ० १ श्लो० ११ वांमें जो वणिक् शब्दको अन्त्यजोंमें गिनाया है उसको लेकर अज्ञजन फड़फडाहट करतेफिरतेहैं उसका भी अर्थ उन-को नाहिं आताहै देखिये उशनास्मृति श्लोक १२–१३-१६–४२–४४–इन पांचोंको कि वैश्यवर्णके पुरुषसे क्षत्रियवर्णकी कन्यामें पैदा होय पुत्र सो प्रतिलोमज अ-योग व (कोली जुलाहा) होय और चोरीसे होय सो पुलिंद (कसाई) हो और ऐसेही वैश्यसे शूद्रक-न्यामें दरजी और चोरीसे कंटकारहोय और श्लोक १८ से १९–२०–२१–२२–२३तक३९–४०–में वैश्यवर्णकी कन्यामें कलालसे पुत्र होय सो धोवी१, धोवीसे हो सो नट कत्थक २, शूद्रसे हो सो गडारिया , तेली ३, नृपसे होय सो मीनाकार ये ग्यारहजाति अभिधनौयानमीमां-साके १७६ वाँ पत्रमें कही हुई कलाल (जो आजक-ल वैश्य सेठ वन रहेहैं वे)इत्यादि जाति जो हैं वे इस व्यासस्मृतिके वणिक्शब्दसे लिये गयेहैं। इसमें प्रमाण हेमाद्रिरचित चतुर्वर्गचिंतामणि आदि ग्रंथ मन्वादिस्मृ-तियां और प्रसिद्धमें ये उपरोक्त जातियां कितनीही अपनेको वैश्य वतातेहैं और चिट्ठि पत्रियोंमें साहजी

पद भी लिखतेहैं परंच उत्तम पुरुष इनको असज और इनके शुष्कान्नकोभी अभक्षही समझतेहैं तो अब कहिये व्यासस्मृतिका वाक्य इन प्रतिलोमजों के सिवाय कहाँ चरितार्थ होगा बस् जब वेदस्मृतिपुराणादिके प्रमाणों व वर्तमान इतिहासादिकोंसे साबित होगया कि क्षत्रिय वैश्यों का अभाव नहीं हुवा और न होगा तव इन दुराचारियोंके इस (वैश्यों को अधिकार नहीं गायत्रीका क्यों कि वैश्य है ही नहीं) कहनेका कौन आदर करैगा अलम् ।

प्र. २३ आपको परिश्रमतो हुवा परंच संक्षेप करिके वैश्योंका कुछ २ आन्हिक (नित्यकर्म) भी कहिये ।

उ. सुनिये यह नित्यकर्म यज्ञोपवीत होय जबसे लेकर जहां तक शरीरकी सामर्थ्य रहै करना चाहिये ।

१—प्रथम जब दो घंटे (पांच घटी) रात्रि बाकी रहै तव निद्राको त्याग बिस्तर पर बैठा होय गुरुदेव और परमात्माका स्मरणकर आगामी दिन भरके कामोंको यथाविधि विचार भूमिको नमस्कार कर जमीन पर खडाहो तहारतके वस्त्र पहिर जनेउको पृष्ठलंबित (पिछाडी लटकती) या एकही वस्त्र हो तो दाहिने कानमें चढाय जलपात्र और मृत्तिका लेकर पखाने (टट्टी) जाकर मलमूत्रोत्सर्ग करे । इसके बाद यथेच्छ शुद्धि कर वहां से अन्यस्थानमें आय अन्य जलादिसे हाथ पांव शुद्ध कर १२ गण्डूष (कुल्ले) करै । इसके बाद

कदंब , बील , अपामार्ग , वृक्ष, इन वृक्षोंका या दूधवाले या कांटेवाले वृक्षोंका आठ अंगुल लंबा दांतण इन (१-६-८-९-११-१४-१५-३० तिथियों व सूर्य , मंगल, शुक्र, शनि, वारों व्यतीपात, संक्रांति, श्राद्ध , व्रतोपवासादि वर्जित) दिनोंको टाल अन्यदिनोंमें पूर्व मुख बैठ दातण करै । और प्रतिपदादि दिनोंमें दांतण की एवज भी बारह कुल्ले अधिक करके आमलायुक्त जलसे स्नान करके धोत्ती धोवीकी धोई न हो सो पहिरै । यह सब काम पूर्व दिशामें सूर्योदयकी जगह लाल अंबर हो उसवक्त पहिले पहिले कर चुकै । अरुणोदय (लाल अंबर) होतेही आसन पर पूर्व मुख बैठ केश शुद्धि कर तिलक अर्द्धचन्द्राकार (-दोजके चांद जैसा) पीला केशर का करै ।

२—दूसरे । संध्यावन्दन करै ।

३—तीसरे । गायत्रीजीका जप करै सो अधिक तो १००८ मध्य कनिष्ठ दर्जे ११ मंत्र जपै । इससे कमती न करै । अधिक करै तो अधिक फल का भागी होताहै । यहां करमाला को उत्तम लिखाहै ।

४—चौथे । हवन की एवज १ ब्राह्मण जिमानेका नियम करले और अमावास्या पूर्णिमाको (१ महिनेमें २) हवन ही करै । और यदि नित्य ही बन सकै तो नित्य ही करै (इसका प्रमाण आश्वलायन श्रौत सूत्रके पूर्वषट्ककी अध्याय २ की प्रथम कण्डिकामें ३-४-५ सूत्र है ।

राजन्यश्चाग्निहोत्रं जुहुयात् ॥ ३ ॥

तपस्विने ब्राह्मणायेतरं कालं भक्तमुपहरेत् ४

ऋतसत्यशीलः सोमसुत् सदा जुहुयात् ॥ ५ ॥

टीका—क्षत्रिय और वैश्य पर्वकाल (पूर्णिमा अमा) में होम करे ॥ ३ ॥ और बाकी दिनोंमें तपस्वी विद्वान् ब्राह्मणको होमकी एवज भात (चांवल पकाके) जिमाया करै, होम करना जरूरत नहीं ॥ ४ ॥ और जो क्षत्रिय वैश्य सत्यवक्ता सदाचारी हो और इच्छा होमकी रखता हो तो सदाही (नित्य) होम करै ॥ ५ ॥

५—पांचवें देवपूजा पुरुषसूक्त पूर्वक षोडशोपचार विधिसे करै ।

६—छठे वैदिक लक्ष्मीसूक्तादि पाठरूप ब्रह्मयज्ञ और तर्पण करै। इन कामोंके बाद द्रव्यार्थ क्रयविक्रयादि संबंधी काम करै जब ६ नो बज चुकै तब किसी विद्वान् ब्राह्मणको बलिवैश्वविधिपूर्वक जिमाय कर आपभी पश्चिमाभिमुख बैठ भोजन कर संध्याकरै, यह सब कर्म १२ बजे पहिले २ करने बाद आपकी जीवका प्रयुक्त व्यापारादि कामोंमें लगै ।

जब ४ च्यार घडी दिन बाकी रह तब दूसरी वक्त मूत्रपुरीषोत्सर्गादिसे यथाविधि निर्वृत्त होय, सायंसंध्या और गायत्री जप कर आवश्यक काम करै और जो घर व दूकान पर दीपक जोया जाय वे सब उत्तराभिमुख रखावै और जरूरी कामोंसे निवृत्त हो १० बजे बाद दक्षिणादिशाको शिर होय इस तरह शयन करै परंच मस्तक

से तिलक, गलेसे पुष्प, मुखसे ताम्बूल, शय्यासे स्त्रीको निद्रा आनेसे पहिले २ अलग कर दे ।

प्र. २४ आपने जो संस्कारादि कहे सो उत्तम पुरुषोंके तो सदा माननीय और कर्त्तव्यही है परंच आजकल वैष्णव नामके भक्त कह बैठतेहैं कि हर तरह कर रामकृष्णके नामका स्मरण करना चाहिये क्या जरूरत है कि कर्मके फंदेमें फँसै, ऐसे कह कर यह जनश्रुतिभी कहतेहैं—

हरको भजै सो हरका होय ऊँच नीच अंतर नहिं कोय"
और अजामिलादि ब्राह्मणोंका दृष्टांत देतेहैं सो क्या बात है ।

उ. ऐसा जो कहतेहैं सो भक्त नहीं वे कुभक्त भगवान्‌के विरोधी हैं देखो (भवाब्धिसेतुमें) व्यास भगवान् लिखतेहैं कि-

अपहाय निजं कर्म कृष्ण कृष्णेति वादिनः ।
ते हरेर्द्वेषिणः पापा धर्मार्थं जन्म यद्धरेः ॥

जो आपके वेदविहित कर्म हैं उनको छोडकर कृष्ण २ राम २ कह कर अपनेको भक्त समझतेहैं वे पापी परमात्माके परम शत्रु हैं क्योंकि खास परमात्माभी रामकृष्णादि रूप धारण कर संस्कार और संध्यावंदनादि कर्म करेहैं वे केवल वर्ण धर्म की दृढता करनेके वास्तेही कियेहैं इसका प्रमाण पद्मपुराण पातालखंडकी ११४ वीं अध्यायके २४१ वें श्लोकसे २५० के श्लोक तक देखो तो अब कहिये जो संध्या नहीं करनेवाले महापातकी मनुष्यको भक्त कैसें मान सक्तेहैं

अब रही अजामेल आदिकी चर्चा सो इस तरह है कि पहिले कितनेही धूर्त उत्तम पुरुषोंके कलंक लगाना अच्छा समझकर ब्रह्माके वस्त्रहरणादि, विष्णुके कुवारि-ंगादि, शिवके मोहनीसंगादि, इन्द्रके अहल्यादि, सूर्यके कुंत्यादि, चंद्रबुधगुरुके तारादि अनेकों के अनेक कलंक लगाय अपना मन प्रसन्न किया और ऐसेही अजामेलके भी हिंसकताका दोष दिखाया वरु उनहीं धूर्तोंने क्षत्रिय वैश्य वर्णा ही नहीं कह कर पुराणोंमें गड़बड़ मचाई है और उनके ही अंशके धूर्त मौजूदा हालमें कहते हैं कि क्षत्रिय वैश्योंको गायत्रीजीका अधिकार नहीं इत्यादि ।

प्र. २५ क्या इस गायत्रीमंत्रसे और कोई कामनाकी पूर्त्ति भी हो-सक्ती है ।

उ. हाँ हाँ देखो देवीभागवतके ११. स्कंधकी २४ वीं अध्याय जिसमें जप व. आहुतिसंख्या निसमें १००८ एक हजारआठ समझें दिन ५१. इक्यावन तक खजडेकी समिध १००८ एक हजार और आठ निस-प्रति उक्त विधि पूर्वक गायत्रीमंत्रसे होम करै तो भूतबाधा दूर होय १. और ऐसेही आमके पत्रोंसे होम करै तो ज्वर नाश हो, २ वच व सोमलतासे क्षयरोग जाय ३ शंखपुष्पोंसे कुष्ट जाय ४ ऊंगेके चांवलोंसे अप-स्मारी जाय ५ गूलर व इक्षुरससे प्रमेह जाय ६ मधुत्रयसे पांडुरोग जाय, ७ लालकमलों से व जातिपुष्पोंसे व. शालितंडुलोंसे व बीलवृक्षके पंचांग (पत्र पुष्प फल जड शाखा) से अथवा चरुयुक्त बीलकी समिधोंसे हवन करै तो लक्ष्मी प्राप्त होय व ज-लस्थ सूर्यबिम्बमें जल ही होम करै तो हेम प्राप्तहो १३

१२ मधुरत्रययुक्त लाजासे कुमारिकाको वरप्रा- १३ जिस अन्नका होम करै वोही अन्न प्रा- व पशुप्रा- १५ प्रियंगुपायस से संन्तान हो १६ पायस होम करके शेष ऋतुमतीको भोजन करावे तो पुत्र हो, १७दूर्वासे अपमृत्यु दूर हो १८ विल्वके नीचे बैठ विल्वपंचाग होमसे गया राज्य मिलै १९ कमलोंसे अकंटक राज्यप्राप्त हो २० पीपल वा अर्कसमिधसे विजयी हो २१ पायस युक्त वेतसे वर्षा हो २२ जुहीके पुष्पोंसे सर्वेष्टप्राप्त होय २३ दुग्धसे मेधा बढै २४ लवणयुक्त मद्दतसे व बीलकेपुष्पोंसे वशीकरण हो २६ दूसरा उपाय जो अश्वत्थको स्पर्श कर १००८ मंत्र जपै व जल पर मंत्र पढ पीवे व भस्म पर मन्त्र पढ मस्तक पर लगावै तो भूतबाधा दूर हो २८ नाभिमात्र जलमें जपै तो वर्षा हो ३० पत्थर पर जपकर उस पत्थरको जिसका भय हो उसकी ओर फेंकै तो भय दूर हो ३१ इत्यादि अनेक हैं इस महामन्त्रको जप १००८ नित्य प्रति १ वर्ष तक एक पगके आधार खडा निराश्रय ऊर्ध्ववाहु हो नक्त हविष्यान्नभोजी रह कर करै सो ऋषि हो और ऐसे ही २ वर्ष करै तो वाक्सिद्धि होय ३ वर्ष करै तो त्रिकालदर्शी होय, ४ वर्ष करै तो भगवान् प्रसन्न हो, ५ वर्ष करै तो अणिमादि युक्त हो, ६ वर्ष करै तो कामरूप हो, ७ वर्ष करै तो चिरजीवी हो, ८ देवत्व हो, ९ मनुत्व हो, १० इंद्रत्व हो, ११ प्राजापत्यत्व हो, ऐसेही १२ द्वादशादि वर्षों के करनेसे ब्रह्मत्वादि अनन्तसिद्धियांहो।

श्रीः ।

आह्निक स्त्रीशिक्षा

आजकल कितनेहीं पुरुषों व स्त्रियों के मुखसे सुना और आधुनिक ग्रंथोंमें लिखा भी देखा कि स्त्रियाँ धर्मसाधनमें शूद्रके समान हैं इससे न तो वे वेद पुराणादि पढनेमें और न कोई आह्निक कर्म करनेमें अधिकारिणी हैं ये स्त्रियाँ तो केवल भोजनके उपयोगी पीसना, पोना, सोना, खोना और रोना आदि के सिवाय कुछ नहीं कर सक्ती हैं इन बातोंको देख सुन उनका भ्रम दूर करनेके लिये एक यह अपूर्व आह्निकस्त्रीशिक्षा तय्यार करवायाथा जिसको कई सालका अरसा हो चुका अबतक नहीं छपाथा उसको अब छपवाकर प्रकट करतेहैं सो जो कोई स्त्री व पुरुष देखनेकी इच्छा रखता हो तो मँगाकर देखै यह आह्निक वेदादि प्रमाणोंसे विभूषित है और कीमत भी अतिसुलभ है ।

मिलनेका पता ।

सदाचारविद्यालय
चौपड आमेर
जयपुर
राजपूताना